ऋग्वेद तथा तीर्थंकर ऋषभ देव

(डॉ. श्री प्रहलादनारायण वाजपेयी)

ऋषभ देव मानव संस्कृति के आदि पुरुष हैं । वह सबसे पहले राजा हुए जिन्होंने गाँवों और नगरों का निर्माण कराया । उनके राज्य काल में वनवास से लोगों ने गाँवों और नगरों में भवन बना कर रहना आरम्भ किया । राज्य को समृद्धि के लिये गायों, घोड़ों और हाथियों का संग्रह आरम्भ किया । मंत्रिमण्डल बनाया । चतुरंगिणी सेनाएँ सजायीं, सेनापतियों की व्यवस्था की । साम, दाम, दण्ड और भेद की नीति का प्रवर्तन किया । विवाहपद्धति का सूत्रपात किया । कृषि की व्यवस्था प्रारम्भ कर खाद्य समस्या का समाधान प्रस्तुत किया । शिल्पकला के विविध आयाम प्रस्तुत किये । व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया । इस प्रकार सभी जीवों को सुखी बनाने वाली सभ्यता का शुभारम्भ किया ।

जीवन के अन्तिम भाग में ऋषभ देव ने राज्य व्यवस्था त्याग दी और श्रमण बन गये । वर्षों तक ऋषभ देव ने अनवरत साधना की । उन्हें कैवल्य लाभ हुआ । श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविका इन चार तीर्थों की स्थापना की । श्रमण धर्म के पाँच महाव्रतों एवं श्रावक धर्म के लिये बारह व्रतों का उपदेश दिया । इस काल में ऋषभ देव प्रथम सम्राट्, प्रथम केवली और सर्व प्रथम तीर्थंकर थे ।

सभ्यता का सूत्रपात करने वाले आदि तीर्थंकर ऋषभ देव के विषय में यह कहा गया है : 'वेदों का मुख अग्निहोत्र है, यज्ञों का मुख यज्ञार्थी है, नक्षत्रों का मुख चन्द्रमा है एवं धर्मों का मुख काश्यप ऋषभ देव है ।'[१]

ऋग्वेद विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ रत्न है उसकी एक ऋचा में तीर्थंकर ऋषभ देव की स्तुति की गई है । वैदिक ऋषि ने भाव विभोर होकर प्रथम तीर्थंकर की स्तुति करते हुए कहा है : 'हे आत्म दृष्टा प्रभो, परम सुख प्राप्त करने के लिये मैं तेरी शरण में आना चाहता हूँ क्योंकि तेरा उपदेश और तेरी वाणी शक्तिशाली है, उनकी मैं अवधारणा करता हूँ । हे प्रभो ! सभी मनुष्यों और देवों में तुम्ही पहले पूर्व गत ज्ञान के प्रतिपादक हो ।'

ऋग्वेद में ऋषभ देव को पूर्व ज्ञान का प्रतिपादक और दुःखों का नाशक कहा गया है । उसमें बताया गया है जैसे जल से भरा मेघ वर्षा का मुख्य स्रोत है, जल से पृथ्वी की प्यास बुझा देता है । उसी प्रकार परम्परागत पूर्वज्ञान के प्रतिपादक महान् ऋषभ देव का शासन वर देने वाला हो । उनके शासन में ऋषि-परम्परा से प्राप्त पूर्व का ज्ञान आत्मिक शत्रु क्रोधादि का विध्वंसक हो । दोनों प्रकार की आत्माएँ (संसारी और सिद्ध) स्वात्म गुणों से ही चमकती हैं । अतः वे राजा हैं, पूर्ण ज्ञान के भण्डार हैं और आत्म पतन नहीं होने देते ।[२]

वर्षा की उपमा आदि तीर्थंकर ऋषभ देव के देशना रूपी जल की ही सूचक है । पूर्व गत ज्ञान का उल्लेख जैन परम्परा के अनुरूप ही है । अतः ऋग्वेद के यह पूर्व ज्ञाता ऋषभ और कोई नहीं प्रथम तीर्थंकर ऋषभ देव ही हैं ।[३]

'आत्मा ही परमात्मा है ।'[४] यह जैन दर्शनका मूलभूत सिद्धान्त है । इस सिद्धान्त को ऋग्वेद में इस प्रकार से प्रतिपादित किया गया है । जिसके चार श्रृंग हैं - अनन्त दर्शन, अनन्त ज्ञान, अनन्त सुख और अनन्त वीर्य । तीन पाद हैं - सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चरित्र । दो शीर्ष हैं - केवल ज्ञान और मुक्ति तथा जो मन, वचन, काय इन तीनों योगों से बद्ध अर्थात् संयत वृषभ हैं उन्हीं ऋषभ देव ने घोषणा की : 'महादेव (परमात्मा) मर्त्यों में निवास करता है ।'[५] अर्थात् प्रत्येक आत्मा में परमात्मा का निवास है ।

ऋषभ देव ने कठोर तपश्चरण रूप साधना कर आत्मा से महात्मा और महात्मा से परमात्मा तक क्रमशः उन्नति करते हुए जन जन के समक्ष यह आदर्श प्रस्तुत किया कि तपस्या से सब कुछ संभव है । एतदर्थ ही ऋग्वेद के मेधावी महर्षि द्वारा निर्दिष्ट किया गया : ऋषभ स्वयं आदि पुरुष थे, जिन्होंने सर्व प्रथम मर्त्य दशा में अमरत्व की उपलब्धि अर्पित की ।[६]

ऋषभ देव ने सभी प्राणियों के प्रति मैत्री भावना का सन्देश दिया । इसीलिये उन्हें विशुद्ध प्रेम पुजारी के रूप में भी ख्याति मिली । उनके मैत्री भावना सन्देश का मुद्गल ऋषि के सारथी (विद्वान नेता) केशी वृषभ जो अरिदमन के लिये नियुक्त थे, उनकी वाणी निकली, जिसके परिणाम स्वरूप मुद्गल ऋषि की गायें

---

१ उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन २५, गा. १६

२ ऋषभं मा समानानां सपत्नानां विषासहिम् ।
हंतारं शत्रुणां कृधि विराजं गोपतिं गवाम् ॥
ऋग्वेद १०/१६६/१

३ मरवस्य ते तीवषस्य प्रजूति
मिर्याभिं वाचमृत्ताय भूषन् ।
इन्द्र क्षितीमामास मानुषीणां ।
विशां देवी नामुत पूर्वयामा ॥ ऋग्वेद २/३४/२
असूतपूर्वा वृषभो ज्यायनि मा
अरय शुरुधः सन्ति पूर्वीः ।
दिवो न पाता विदथस्यधीमिः ।
क्षमं राजाना प्रतिवोदधाथे ॥ ऋग्वेद ५२/३८

४ (अ) अप्पा सो परमप्पा । (ब) सदा् भुक्तं.....कारण परमात्मानं जानाति । नियमसार, तात्पर्य वृत्ति, गा. ९६

५ चत्वारि श्रृङ्गा त्रयो अस्य पादा
द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य ।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीती ।
महादेवो मर्त्यानाविवेश ॥ ऋग्वेद ४/५८/३

६ तन्मर्त्यस्य देवत्व सजातमग्रः ।
ऋग्वेद ३१/१७

सरल हृदय सद्भावना, स्नेह सुमति सहकार ।
जयन्तसेन जीवन भुवि, सुखदा पांच 'स' कार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो दुर्धर रथ से योजित हुई दौड़ रही थीं, वे निश्चल होकर मौद्गलानी की और लौट पड़ीं ।[1]

ऋग्वेद की प्रस्तुत ऋचा में 'अरि दमन' कर्मरूप शत्रुओं का दमन करने के लिये प्रयुक्त हुआ है । गायों का तात्पर्य इन्द्रियों से है और दुर्धर रथ का मन्तव्य शरीर से है । आदि तीर्थंकर ऋषभ देव की अमृत वाणी से अस्थिर इन्द्रियाँ स्थिर होकर मुद्गल की स्वात्म वृत्ति की ओर लौट आयीं ।

ऋषभ देव की ऋग्वेद में अनेक स्थलों पर महादेव के रूप में स्तुति की गई है । सर्व प्रथम अमरत्व पाने वाले के रूप में और अहिंसक आत्म साधकों के रूप में उनकी स्तुति की गयी है ।

ऋग्वेद में ऋषभ देव स्तुत्य हैं - मधुर भाषी, बृहस्पति, स्तुति योग्य ऋषभ देव को पूजा साधक मन्त्रों द्वारा वर्धित करो, वे अपने स्तोता को नहीं छोड़ते ।[2] एक जगह कहा गया है - तेजस्वी ऋषभ के लिये स्तुति प्रेरित करो ।[3] ऋग्वेद के ही रुद्र सूक्त में एक ऋचा है - हे वृषभ ! ऐसी कृपा करो कि हमें कभी नष्ट न हों ।[4]

अन्तिम स्तुति जहाँ की गई है वहाँ वृषभ का पाँच बार उल्लेख आया है । रुद्र को आर्हत् शब्द से सम्बोधित किया गया है । यह आर्हत उपाधि ऋषभ देव की ही हो सकती है क्योंकि उनका प्रतिपादित धर्म आर्हत धर्म के नाम से विश्व विख्यात है ।

शतरुद्रीय स्तोत्र में रुद्र की स्तुति के मन्त्र हैं जिनमें रुद्र को शिव, शिवतर तथा शंकर कहा गया है ।"[5] श्वेताश्वतर उपनिषद में रुद्र को ईश, महेश्वर, शिव और ईशान कहा गया है । मैत्रायणी उपनिषद् में इन्हें शम्भु कहा गया है । पुराणों में शिव को महेश्वर, त्र्यंबक, हर, वृषभध्वज, भव, परमेश्वर, त्रिनेत्र, वृषांक, नटराज, जटी, कपर्दी, दिग्वस्त्र, यती, आत्मसंयमी, ब्रह्मचारी, ऊर्ध्व रेता आदि विशेषणों से अभिहित किया गया है । यदि ध्यान से देखा जाय तो यह सभी विशेषण ऋषभ देव तीर्थंकर के ही प्रतीत होते हैं । शिव पुराण में शिव का आदि तीर्थंकर ऋषभ देव के रूप में अवतार लेने का उल्लेख है ।[6] प्रभास पुराण में भी इसी प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है ।[7]

आदि देव शिव और आदि तीर्थंकर के स्वरूप, गुण, तप, ज्ञान और चैतन्य में इतना साम्य है कि ऐसा लगता ही नहीं कि इनका पृथक् पृथक् अस्तित्व हो । अधिक उपयुक्त यह लगता है व्यक्तित्व एक ही है जिसे भिन्न भिन्न रुचि और भिन्न धारणा के लोग भिन्न नामों से जानते और मानते हैं ।

शिव की जन्म तिथि शिव रात्रि के रूप में व्रत रखकर मनायी जाती है । तीर्थंकर ऋषभ देव के शिव गति गमन की तिथि भी यही है जिस दिन ऋषभ देव को शिवत्व उत्पन्न हुआ था । उस दिन समस्त साधु संघ ने दिन को उपवास रखा था तथा रात्रि में जागरण कर के शिव गति प्राप्त ऋषभ देव की आराधना की, इस रूप में यह तिथि शिव रात्रि के नाम से प्रसिद्ध हुई ।

शिव को कैलाशवासी कहा जाता है । तीर्थंकर ऋषभ के तप और निर्वाण का क्षेत्र कैलाश पर्वत है । जिस प्रकार शिव ने तप में विघ्न उपस्थित करनेवाले कामदेव को नष्टकर शिवा से विवाह किया । उसी प्रकार तीर्थंकर ऋषभ देव ने मोह को नष्ट कर शिवा देवी के रूप में शिव सुन्दरी मुक्ति से विवाह किया ।

शिव के अनुयायी गण कहलाते हैं और उनके प्रमुख नायक शिव के पुत्र गणेश थे । उसी प्रकार ऋषभ देव के तीर्थ में भी उनके अनुयायी मुनि गण कहलाते थे । जो गण के अधिनायक होते थे वे गणाधिप, या गणधर कहलाते थे । ऋषभ देव के प्रमुख गणधर भरत पुत्र वृषभसेन थे ।

पाणिनि ने अ इ उ ण आदि सूत्रों को महेश्वर से प्राप्त हुआ बताया है । जैन परम्परा ऋषभ देव को महेश्वर मानती है । उन्होंने सबसे पहले अपनी पुत्री 'ब्राह्मी' को ब्राह्मी लिपि अर्थात् अक्षर विद्या का ज्ञान कराया था ।

शिव का वाहन वृषभ है जबकि ऋषभ देव का चिह्न वृषभ है । शिव त्रिशूल धारी हैं । जैन परम्परा में वह त्रिशूल सम्यग् दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग् चरित्र रूप रत्नत्रय का प्रतीक है ।

भागवत पुराण में ऋषभ देव को विष्णु का आठवाँ अवतार माना गया है । गायत्री मन्त्र द्वारा ऋषभ देव की ही स्तुति की गयी है । अथर्व वेद में परम ऐश्वर्य के लिये ऋषभ देव की विद्वानों के जाने योग्य मार्गों से बड़े ज्ञान वाले अग्नि के समान स्तुति की गयी है । (अथर्ववेद ९/४/३)

अथर्ववेद में ऋषभ देव की पापों से मुक्त करने वाले देवताओं में अग्रगण्य एवं भव सागर से पार जाने का मार्गदर्शन करने वाले तेजस्वी व्यक्तित्व के रूप में स्तुति की गई है : 'पापों से मुक्त पूजनीय देवताओं में सर्व प्रथम तथा भव सागर के पोत को मैं हृदय से आव्हान करता हूँ । हे सहचर बन्धुओं ! तुम आत्मीय श्रद्धा द्वारा उसके आत्म बल और तेज को धारण करो ।[8]

---

१ ककर्दवे वृषभो युक्तआसीद्
अवावचीत् सारथिरस्य केशी ।
दुधेर्युक्तस्य द्रवतः सहानसः
ऋच्छन्तिष्मा निष्पदो मुद्गलानीम् ॥ ऋग्वेद १०/१०२/६

२ अनर्वाणं ऋषभं मन्द्र जिह्वं, वृहस्पतिं वर्धया नव्य मर्के ।
ऋग्वेद १/१९०/१

३ प्राग्नये वाचमीरय ऋग्वेद १०/१८७

४ एव वज्रो वृषभ चेकितान यथा देव न हणीयं न हंसी ।
ऋग्वेद रुद्रसूक्त २/३३/१५

५ यजुर्वेद (त्रैत्तिरीय संहिता) १/८६, वाजसनेयी ३/५७/६३

६ इत्थं प्रभाव ऋषभोऽवतारः शंकरस्य मे । सतां गतिर्दीनबन्धुर्नवमः कथितस्तव॥
ऋषभस्य चरित्रं हि परमं पावनं महत् ।
स्वर्ग्ययशस्यमायुष्यं श्रोतव्यं च प्रयत्नतः ॥ शिवपुराण ४/४७-४८

७ कैलाशे विमले रम्ये वृषभोऽयं जिनेश्वरः।
चकार स्वावातारः च सर्वज्ञ : सर्वगः
शिवः ॥
प्रभासपुराण ४९

८ अहोमुचं वृषमं यज्ञियानां,
विराजन्तं प्रथममध्वराणाम् ।
अप्जां न पातमश्विना हुवे धिय,
इन्द्रियेण इन्द्रियं दत्तमोजः ॥ अथर्ववेद
कारिका १९/४२/४

नारी तूं नारायणी, तज छल मान प्रपंच !
जयन्तसेन पावन मति, हो निज वैभव संच ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्न धारक अर्थात्, ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप रत्नत्रय को धारण करने वाले, विश्व वेदस्, विश्व तत्व के ज्ञाता, मोक्ष नेता, तीर्थंकर ऋषभ देव ने प्रेम के ऐसे पवित्र वातावरण की सृष्टि की थी कि प्रेम की पवित्रता से ओतप्रोत होने के कारण पशुओंको भी मानव के समान माना जाने लगा था ।

ऋषभ देव प्रेम के राजा हैं । उन्होंने उस संघ की स्थापना की है जिसमें पशु भी मानव के समान माने जाते थे और उनको कोई भी मार नहीं सकता था ।[१]

ऋषभ देव का एक नाम केशीया केशरिया जी है । उदयपुर जिले का एक प्रसिद्ध तीर्थ केसरिया नाथ भी है । केसरिया तीर्थ पर दिगम्बर, श्वेताम्बर एवं वैष्णव आदि सभी सम्प्रदायवाले समान रूप से श्रद्धा के साथ यात्रा करते हैं ।

इस क्षेत्र के आदिवासी केसरिया नाथ की शपथ ले कर जो भी वचन देते हैं । उसे वह केसरियानाथजी की आन मानते हैं । उस वचन का पालन आदिवासी अपने प्राण देकर भी करते हैं । इस सन्दर्भ में मान्यता यह है कि सभ्यता के सूत्रपात कार्य क्रम में ऋषभ देव जिस समय साधना रत थे आदिवासियों ने भी तीर्थंकर ऋषभ देव से मार्गदर्शन चाहा था तो तीर्थंकर ऋषभ देव ने उन्हें वचन का पालन करने की शिक्षा दी थी । प्रथम तीर्थंकर द्वारा दी गई शिक्षा को इन आदिवासियों ने आजतक परम्परागत क्रम में हृदयंगम कररखा है ।

ऋग्वेद में ऋषभ देव की स्तुति केशी के रूप में की गई है : केशी अग्नि, जल, स्वर्ग तथा पृथ्वी को धारण करता है । केशी विश्व के समस्त तत्त्वों का दर्शन कराता है, और केशी ही प्रकाशमान ज्ञान ज्योति कहलाता है ।[२]

जैन साहित्य के अनुसार जब भगवान ऋषभ देव साधु बने उस समय उन्होंने चार मुष्टि केशों का लोभ किया था । सामान्यरूप से पाँच मुष्टि केश लोभ करने की परम्परा रही है । भगवान केशों का लोभ कर रहे थे । दोनों भागों के केशों का लोभ करना शेष था । उस समय इन्द्र की प्रार्थना से भगवान ने उसी प्रकार रहने दिया ।[३]

अपने देश में ही नहीं विदेशों में भी ऋषभ देव मानव सभ्यता का सूत्रपात करने वाले महापुरुष के रूप में पूज्य रहे हैं । चीनी त्रिपिटकों में उनका उल्लेख मिलता है । जापानी उनको रोकशाब कह कर पुकारते हैं ।

मध्य एशिया, मिश्र और यूनान तथा फणिक लोगों की भाषा में उन्हें रेशेफ कहा गया जिसका अर्थ सींगोंवाला देवता है जो ऋषभ का अपभ्रंश रूप है ।[४]

अक्कड़ और सुमेरों को संयुक्त प्रवृत्तियों से उत्पन्न बेबी लोनिया की संस्कृति और सभ्यता बहुत प्राचीन मानी जाती है । उनके विजयी राजा (२१२३-२०८१ ई. पू.) के शिला लेखों से ज्ञात होता है कि स्वर्ग और पृथ्वी का देवता वृषभ था ।[५]

हित्ती जाति पर भी ऋषभ देव का प्रभाव है । उनका मुख्य देवता ऋतु देव था । उसका वाहन बैल था । जिसे तेशुव कहा जाता था । जो तित्थयर उसभ का अपभ्रंश ज्ञात होता है ।

वास्तविकता यह है कि ऋषभ देव मानव सभ्यता के आदि सूत्रधार हैं ।

---

१ नास्य पशून समानान् हिनस्ति वही

२ केश्यग्निं विषं केशी विभाति रोदसी ।
केशी विश्व स्वर्दृशे केशीदं ज्योतिरुच्यते ॥
ऋग्वेद १०/१३६/१

३ जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति वक्षस्कार २, सूत्र ३०

४ आचार्य भिक्षु स्मृति ग्रन्थ दि. खं. पृ. ४

५ बाबू छोटे लाल जैनस्मृति ग्रन्थ पृ. १०५

मधुकर-मौक्तिक

लोग कहते हैं, हमने परमात्मा की पूजा की, उसके नाम की माला फेरी, पर बदले में कुछ नहीं मिला । अरे, जो कुछ मिला है, वह पूजा-भक्ति से, और नाम-स्मरण से ही मिला है । मनुष्य-जन्म मिला, पंचेन्द्रियों की पूर्णता प्राप्त हुई, आर्य कुल में जन्म मिला, ये क्या कम हैं ? अब तो परमात्मा के प्रति कृतज्ञ बने रह कर पूजा-भक्ति करना है, जिससे परिपूर्णता प्राप्त हो सके ।

– जैनाचार्य श्रीमद् जयंतसेनसूरि 'मधुकर'

ज्ञानी कहते हैं - जीवन सफल बनाओ । पंच परमेष्ठी भगवन्त हमारे जीवन के आधार हैं और बाह्य-अभ्यंतर जीवन के विकास-कर्ता हैं । हम स्वयं को उनके निकट रख और उन्हें अपने हृदय में प्रतिष्ठित कर जीवन में आने वाले अनेक झंझावतों से अपने को बचायें । अपने जीवन को कलषुताओं से मुक्त कर सर्व प्रकार से वैभव-संपन्न बनायें; शान्तिमय बनायें । हम जीवन को सफलता की ओर ले चलें । यही इन पंच परमेष्ठियों की आराधना के बाद हमें मुख्य रूप से समझना है - सीखना है ।

मनुष्य ने जगत् में जन्म लिया है तो जीना तो है ही; पर जीना ऐसे है कि जिसके जीने में जीवन का आदर्श रूप निरन्तर दीखता रहे । ज्ञानी पुरुषों ने जीवन का जो लक्ष्य बनाया है, उस लक्ष्य को सामने रख कर हम अपने कार्य करते रहें ।

ज्ञानियों के वचन अपने जीवन में आदर्श बन जाँऐं; वे हमारे आचरण में आ जाएँ, तो हमारा जीवन सफल बन जाए; तो हम नवकार मन्त्र को अपने गले का हार बना लें और उसे संभाल कर रखें। वह हमसे कभी दूर न हो, ऐसी स्थिति हम बनाये रखें; तब अवश्य ही हम सबका जीवन प्रगतिशील हो जाएगा और हम मंजिल तक पहुँच जाएँगे ।

– जैनाचार्य श्रीमद् जयंतसेनसूरि 'मधुकर'

आवश्यकता से अधिक, संचय है अपराध ।
जयन्तसेन तजो अधिक, पाओ शान्ति अबाध ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org